8 कर्ण

0751CH08

पांडवों ने पहले कृपाचार्य से और बाद में द्रोणाचार्य से अस्त्र-शस्त्र की शिक्षा पाई। उनको जब विद्या में काफी निपुणता प्राप्त हो गई, तो एक भारी समारोह किया गया, जिसमें सबने अपने कौशल का प्रदर्शन किया। सारे नगरवासी इस समारोह को देखने आए थे। तरह-तरह के खेल हुए और हरेक राजकुमार यही चाहता था कि वही सबसे बढ़कर निकले। आपस में प्रतिस्पर्धा बड़े ज़ोर की थी, परंतु तीर चलाने में पांडु-पुत्र अर्जुन का कोई सानी न था। अर्जुन ने धनुष-विद्या में कमाल का खेल दिखाया। उसकी अद्‌भुत चतुरता को देखकर सभी दर्शक और राजवंश के सभी उपस्थित लोग दंग रह गए। यह देखकर दुर्योधन का मन ईर्ष्या से जलने लगा। अभी खेल हो ही रहा था कि इतने में रंगभूमि के द्वार पर खम ठोंकते हुए एक रोबीला और तेजस्वी युवक मस्तानी चाल से आकर अर्जुन के सामने खड़ा हो गया। यह युवक और कोई नहीं, अधिरथ द्वारा पोषित कुंती-पुत्र कर्ण ही था, लेकिन उसके कुंती-पुत्र होने की बात किसी को मालूम न थी। रंगभूमि में आते ही उसने अर्जुन को ललकारा- "अर्जुन! जो भी करतब तुमने यहाँ दिखाए हैं, उनसे बढ़कर कौशल मैं दिखा सकता हूँ। क्या तुम इसके लिए तैयार हो?"

इस चुनौती को सुनकर दर्शक-मंडली में बड़ी खलबली मच गई, पर ईर्ष्या की आग से जलनेवाले दुर्योधन को बड़ी राहत मिली। वह बड़ा प्रसन्न हुआ। उसने तपाक से कर्ण का स्वागत किया और उसे छाती से लगाकर बोला-"कहो कर्ण, कैसे आए? बताओ, हम तुम्हारे लिए क्या कर सकते हैं?"

कर्ण बोला-"राजन्! मैं अर्जुन से द्वंद्व युद्ध और आपसे मित्रता करना चाहता हूँ।"

कर्ण की चुनौती को सुनकर अर्जुन को बड़ा तैश आया। वह बोला-"कर्ण! सभा में जो बिना बुलाए आते हैं और जो बिना किसी के पूछे बोलने लगते हैं, वे निंदा के योग्य होते हैं।"

यह सुनकर कर्ण ने कहा-"अर्जुन, यह उत्सव केवल तुम्हारे लिए ही नहीं मनाया जा रहा है। सभी प्रजाजन इसमें भाग लेने का अधिकार रखते हैं। व्यर्थ डींगें मारने से फायदा क्या? चलो, तीरों से बात कर लें!"

जब कर्ण ने अर्जुन को यों चुनौती दी, तो दर्शकों ने तालियाँ बजाईं। उनके दो दल बन गए। एक दल अर्जुन को बढ़ावा देने लगा और दूसरा कर्ण को। इसी प्रकार वहाँ इकट्ठी स्त्रियों के भी दो दल बन गए। कुंती ने कर्ण को देखते ही पहचान लिया और भय तथा लज्जा के मारे मूर्छित-सी हो गई। उसकी यह हालत देखकर विदुर ने दासियों को बुलाकर उसे चेत करवाया।

इसी बीच कृपाचार्य ने उठकर कर्ण से कहा-"अज्ञात वीर! महाराज पांडु का पुत्र और

कुरुवंश का वीर अर्जुन तुम्हारे साथ द्वंद्व युद्ध करने के लिए तैयार है, किंतु तुम पहले अपना परिचय तो दो! तुम कौन हो, किसके पुत्र हो, किस राजकुल को तुम विभूषित करते हो? द्वंद्व युद्ध बराबर वालों में ही होता है। कुल का परिचय पाए बगैर राजकुमार कभी द्वंद्व करने को तैयार नहीं होते।" कृपाचार्य की यह बात सुनकर कर्ण का सिर झुक गया।

कर्ण को इस तरह देखकर दुर्योधन उठ खड़ा हुआ और बोला—"अगर बराबरी की बात है, तो मैं आज ही कर्ण को अंगदेश का राजा बनाता हूँ!" यह कहकर दुर्योधन ने तुरंत पितामह भीष्म एवं पिता धृतराष्ट्र से अनुमति लेकर वहीं रंगभूमि में ही राज्याभिषेक की सामग्री मँगवाई और कर्ण का राज्याभिषेक करके उसे अंगदेश का राजा घोषित कर दिया।

इतने में बूढ़ा सारथी अधिरथ, जिसने कर्ण को पाला था, लाठी टेकता हुआ और भय के मारे काँपता हुआ सभा में प्रविष्ट हुआ। कर्ण, जो अभी-अभी अंगदेश का नरेश बना दिया गया था, उसको देखते ही धनुष नीचे रखकर उठ खड़ा हुआ और पिता मानकर बड़े आदर के साथ उसके आगे सिर नवाया। बूढ़े ने भी 'बेटा' कहकर उसे गले लगा लिया। यह देखकर भीम खूब कहकहा मारकर हँस पड़ा और बोला—"सारथी के बेटे, धनुष छोड़कर हाथ में चाबुक लो, चाबुक! वही तुम्हें शोभा देगा। तुम भला कब से अर्जुन के साथ द्वंद्व युद्ध करने के योग्य हो गए?"

यह सब देखकर सभा में खलबली मच गई। इस समय सूरज भी डूब रहा था। इस कारण सभा विसर्जित हो गई। मशालों और दीपकों की रोशनी में दर्शक-वृंद अपनी-अपनी पसंद के अनुसार अर्जुन, कर्ण और दुर्योधन की जय बोलते जाते थे।

इस घटना के बहुत समय बाद एक बार इंद्र बूढ़े ब्राह्मण के वेश में अंग-नरेश कर्ण के पास आए और उसके जन्मजात कवच और कुंडलों की भिक्षा माँगी। इंद्र को डर था कि भावी युद्ध में कर्ण की शक्ति से अर्जुन पर विपत्ति आ सकती है। इस कारण कर्ण की ताकत कम करने की इच्छा से ही उन्होंने उससे यह भिक्षा माँगी थी।

कर्ण को सूर्यदेव ने पहले ही सचेत कर दिया था कि उसे धोखा देने के लिए इंद्र ऐसी चाल चलनेवाले हैं, परंतु कर्ण इतना दानी था कि किसी के कुछ माँगने पर वह मना कर ही नहीं सकता था। इस कारण यह जानते हुए भी कि भिखारी के वेश में इंद्र धोखा कर रहे हैं, कर्ण ने अपने जन्मजात कवच और कुंडल निकालकर भिक्षा में दे दिए।

इस अद्‌भुत दानवीरता को देखकर इंद्र चकित रह गए। कर्ण की प्रशंसा करते हुए बोले—"कर्ण, तुमसे मैं बहुत प्रसन्न हूँ। तुम जो भी वरदान चाहो, माँगो।"

कर्ण ने देवराज से कहा—"आप प्रसन्न हैं, तो शत्रुओं का संहार करनेवाला अपना 'शक्ति' नामक शस्त्र मुझे प्रदान करें!"

बड़ी प्रसन्नता के साथ अपना वह शस्त्र कर्ण को देते हुए देवराज ने कहा—"युद्ध में तुम जिस किसी को लक्ष्य करके इसका प्रयोग करोगे, वह अवश्य मारा जाएगा, परंतु एक ही बार तुम इसका प्रयोग कर सकोगे। तुम्हारे शत्रु को मारने के बाद यह मेरे पास वापस आ जाएगा।" इतना कहकर इंद्र चले गए।

एक बार कर्ण को परशुराम जी से ब्रह्मास्त्र सीखने की इच्छा हुई। इसलिए वह ब्राह्मण के वेश में परशुराम जी के पास गया और प्रार्थना की कि उसे शिष्य स्वीकार करने की कृपा करें। परशुराम जी ने उसे ब्राह्मण समझकर शिष्य बना लिया। इस प्रकार छल से कर्ण ने ब्रह्मास्त्र चलाना सीख लिया।

एक दिन परशुराम कर्ण की जाँघ पर सिर रखकर सो रहे थे। इतने में एक काला भौंरा कर्ण की जाँघ के नीचे घुस गया और काटने लगा। कीड़े के काटने से कर्ण को बहुत पीड़ा हुई और जाँघ से लहू की धारा बहने लगी, पर कर्ण ने इस भय से कि कहीं गुरुदेव की नींद न खुल जाए, जाँघ को ज़रा भी हिलाया-डुलाया नहीं। जब खून से परशुराम की देह भीगने लगी, तो उनकी नींद खुली। उन्होंने देखा कि कर्ण की जाँघ से खून बह रहा है। यह देखकर परशुराम बोले—"बेटा, सच बताओ, तुम कौन हो?" तब कर्ण असली बात न छिपा सका। उसने स्वीकार कर लिया कि वह ब्राह्मण नहीं, बल्कि सूत-पुत्र है। यह जानकर परशुराम को बड़ा क्रोध आया। अतः उन्होंने उसी घड़ी कर्ण को शाप देते हुए कहा—"चूँकि तुमने अपने गुरु को ही धोखा दिया है, इसलिए जो विद्या तुमने मुझसे सीखी है, वह अंत समय में तुम्हारे किसी काम न आएगी। ऐन वक्त पर तुम उसे भूल जाओगे और रणक्षेत्र में तुम्हारे रथ का पहिया पृथ्वी में धँस जाएगा।"

परशुराम जी का यह शाप झूठा न हुआ। जीवनभर कर्ण को उनकी सिखाई हुई ब्रह्मास्त्र-विद्या याद रही, पर कुरुक्षेत्र के मैदान में अर्जुन से युद्ध करते समय कर्ण को वह याद न रही। दुर्योधन के घनिष्ठ मित्र कर्ण ने अंत समय तक कौरवों का साथ न छोड़ा। कुरुक्षेत्र के युद्ध में भीष्म तथा आचार्य द्रोण के आहत हो जाने के बाद दुर्योधन ने कर्ण को ही कौरव-सेना का सेनापति बनाया था। कर्ण ने दो दिन तक अद्भुत कुशलता के साथ युद्ध का संचालन किया। आखिर

जब शापवश उसके रथ का पहिया ज़मीन में धँस गया और वह धनुष-बाण रखकर ज़मीन में धँसा हुआ पहिया निकालने का प्रयत्न करने लगा, तभी अर्जुन ने उस महारथी पर प्रहार किया। माता कुंती ने जब यह सुना, तो उसके दुख का पार न रहा।